मीडिया की बदलती प्रवृतियां और सरोकार

नरेश कुमार काण्डपाल*

संक्षिप्त सारांश

भारतीय मीडिया ने अभिव्यक्ति के प्रखर माध्यम के रूप में जनचेतना को निरन्तर प्रभावित किया है। मीडिया विभिन्न रूपों में क्षण–प्रतिक्षण जीवन को प्रभावित करता रहा है। पारदर्शिता और निष्पक्षता मीडिया का मुख्य आधार है, जिस पर चलकर ही वह जन विश्वास का वाहक बना रहता है। पिछले दो दशकों से लगातार मीडिया ने जिस तरह से जन विश्वास के आधार को स्वयं ही ध्वस्त किया है, उससे अब मीडिया की विश्वसनीयता पर सवाल खड़े हुए हैं। आधुनिक संचार माध्यमों ने शासकों व शासितों, उत्पादकों व उपभोक्ताओं, दृष्टि व क्रिया और कल्पना व कृति को एक साथ विभिन्न स्तरों पर प्रभावित किया है। यही नहीं संचार के इलैक्ट्रानिक माध्यमों ने राष्ट्रों की अभेद्य व पवित्र समझी जाने वाली संप्रभुता एवं भौगोलिक सीमाओं और सामाजिक–सांस्कृतिक अस्मिताओं को भी पहले जैसा स्थायी नहीं रहने दिया है। दक्षिण–पश्चिम एशिया की मध्ययुगीन मूल्य–दृष्टियों पर आधारित व्यवस्थाएं एवं राजसत्ताएं, टी०वी० बीम–हमलों के सामने लाचार खड़ी हैं। इस पूर्व औद्योगिक युग के मानदंडों पर चलने वाले इन समाजों के समक्ष भविष्य में 'सर्वाइवल' का सवाल पैदा हो गया है। मीडिया ने जिस तरह से तेजी से अपने मूल्यों के साथ समझौता किया है, उसके बाद जरूरी यह है कि वह समय रहते आत्मंथन कर पुनः जन–विश्वास की कसौटी पर अपनी सूरत देखे।

भूमण्डलीकरण और उदारीकरण के इस दौर में भारत में मीडिया की महत्ता बेहद व्यापक हो गई है। मीडिया का लिखित रूप जितना प्रभावशाली है, दृश्य, श्रव्य मीडिया अपने विविध रूपों में और भी अधिक सशक्त है।

सूचना तकनीकी के इस युग में संचार माध्यमों ने स्पेस और समय के अंतराल को खत्म कर दिया। हर पल की घटनाएं टेलीविजन पर हमारे अपने घरों में ही घटित होने लगती हैं। मीडिया संसार को बदल रहा हैं – यह मीडिया की ही सदी है।

बाजारवाद के दौर में आम जन एक उपभोक्ता मात्र बनकर रह गया है। हमें क्या पहनना है, क्या खाना है, क्या खरीदना है – सब इलैक्ट्रोनिक मीडिया तय करता है। इलैक्ट्रोनिक मीडिया हमारी चेतना पर पूर्णरूपेण अच्छादित हो गया है।

समाचारपत्र पढ़ी लिखी जनता की दृष्टि में संसार का वास्तविक चित्र मानकर आदर की दृष्टि से देखा जाता है। यह आजकल की बात नहीं, जन्मकाल से ही पत्र के साधारण पाठक इसमें दिए गये समाचारों को सच्चा मानते रहे हैं। यह समाचार पत्र की शक्ति की आधारशिला है। यदि साधारण पाठक पत्र की बात को सच्चा न समझे तो उसे खरीदने या पढ़ने का कष्ट कभी न उठाये।

किसी भी समाचार की तथ्यपरकता, संतुलन, वस्तुपरकता, न्यायसंगतता के तत्व उसकी ग्राहता को व्यापक और सर्वग्राही बनाते हैं। इन्हीं मूल तत्वों को जब तोड़–मरोड़कर

* शोध छात्र,राजनीति विज्ञान, बरेली कालेज, बरेली।

प्रस्तुत किया जाता है तब वह पीत पत्रकारिता का रूप ग्रहण कर लेता है। इससे पाठक भ्रमित हो जाता है और वास्तविकता तत्व को समझने में अपने को असफल पाता है। पीत पत्रकारिता समाचार के मूल तत्व को न प्रकाशित करके ऐसे सनसनीखेज समाचारों को प्रस्तुत कर देती है जिससे समाज में अशान्ति का वातावरण व्याप्त हो जाता हैं। इसका प्रमुख स्रोत अफवाहें होती हैं। परंतु उसको इस प्रकार से प्रस्तुत किया जाता है जिससे असत्य का अंश छिप जाता है अर्थात् असत्य सत्य के रूप में भासित होने लगता है। इस समाचार के प्रकाशित होते ही समाज की विचित्र स्थिति हो जाती है।

पत्रकार जिस पर सत्य को सामने लाना, जनरूचि को परिकृष्त करना, सद्भावना का संचार और समाज में स्वस्थ मानसिकता को स्थापित करना जैसा गुरू भार था, आज वह संदेह के घेरे में खड़ा दिखता है। सत्य परख के लिए साधारण और विशिष्ट सभी, विभिन्न स्रोतों को खंगालने को विवश हैं। कहीं न कहीं पत्रकारिता की प्रामाणिकता चुक गई है। यह सत्य है कि व्यवस्था के शिकंजे में फंसी पत्रकारिता कभी अपने कर्म के प्रति ईमानदार नहीं हो सकती। आदर्श पत्रकारिता की यह मांग है कि कोई भी पत्रकार दुर्मति, दुर्भावना और दुर्नीति से प्रेरित हो किसी की प्रतिष्ठा को संकट में न डाले। अर्धसत्य, असत्य और पक्षपात के सम्बल पर पगड़ी–उछाल की प्रक्रिया निन्दनीय है।

पत्रकारिता के पावन दायित्वों से विलग होकर जब पाठकों को आकर्षित करने के लिए भड़कीले समाचार विशेष रोचक चटपटी शैली में प्रस्तुत होने लगे तब ही पीत पत्रकारिता ने छिछली आधारहीन बातों पर ध्यान दिया। चरित्र–निर्माण का आदर्श जाता रहा अब तो यौन, हिंसा, अपराध, कुकृत्य, अनैतिकतापूर्ण पेचीले नशीले और फड़कते हुए चटकारेदार मामलों की नदी हरहराती है, किस्से का झरना झर्राता है और पाठक आनंद एवं भ्रम के भंवर में डूबने–उतरने लगते हैं। आधुनिक युग में पत्र स्वयं में उद्योग हैं और प्रबन्धक में इसे मीडिया उद्यम के रूप में समाचार पत्र निकालने की अवधारणा अब नहीं रहीं। समाचार अब अपने आप में बड़े व्यवसाय हैं, कभी टी०वी० के साथ, तो कभी अन्य मीडिया हितों के साथ,..... अन्य व्यावसायिक हितों के विस्तार की अपेक्षा व्यावसायिक उद्यम ही अधिक हैं।

मौजूदा समय में पत्रकारिता ने जिस तरह से मीडिया 'उद्योग–व्यवसाय' है, इस बात को नकारा नहीं जा सकता, जिसने बाजारवाद, वैश्वीकरण और अश्लीलता को बढ़ाया है। मीडिया इसका माध्यम बनता जा रहा है। अनजाने या बाजार के दबाव में जनमानस में घुल रहे इस जहर ने व्यक्ति और समाज की मानसिकता बदल दी है। प्रिंट मीडिया ने प्रतिस्पर्द्धा के इस दौर में बाजारवाद का खेल स्वीकार कर लिया हैं। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने तो इससे कई कदम आगे बढ़ कर कलुशितता बढ़ा दी है। आवश्यक वस्तुओं को भी उपभोक्ताओं पर थोपे जाने का मीडिया सहज ही माध्यम बन गया है। मीडिया को बाजार ने अपने अधीन कर लिया है वस्तुतः मनुष्य की आवश्यकता के परिदृश्य से निकल कर विज्ञापनों के माध्यम से उपभोक्ता तक पहुंच रही है।

उपभोक्ता विज्ञापन आम आदमी को हिप्नोटाइज (सम्मोहित) कर शोषण की हद तक जा पहुंचा है। किसी–न–किसी ब्रांडनेम से ग्रसित है। विज्ञापन ने हर वस्तु की कीमत में बढ़ोत्तरी कर दी है। साथ ही उपभोक्ता के मन में उत्पाद के उपभोग की मानसिकता को जन्म दे दिया है। मैगी और चाकलेट भले ही आटे या दुग्ध प्रसंस्करण हों– दस गुण मूल्य देकर खाना 'विज्ञापन' के सम्मोहन में शान का सवाल हो गया है।

हमारे मीडिया में पैसा कमाने के लिए हाल में जिस तरह से राजनीतिक और आर्थिक खबरों को तोड़ा–मरोड़ा गया, यह प्रवृत्ति हमारी राजनीति और अर्थव्यवस्था की छवि को ध्वस्त कर सकती है।

भूतपूर्व राष्ट्रपति ए०पी०जे० अब्दुल कलाम कहते हैं : 'आप केवल 300 मिलियन शहरी लागों का मीडिया बनकर नहीं रह सकते हैं। आपको छः लाख गांवो और दो लाख पंचायतों का भी मीडिया बनना होगा। क्या समाचार पत्र अन्य व्यापारों की भांति एक व्यापार मात्र हैं या वह समाजसेवा का साधन हैं? व्यवहार में चाहे हमें ऐसा प्रतीत हो कि आजकल अनेक स्थानों पर समाचारपत्र एक व्यापार मात्र समझा जाता है, परंतु यह मानी हुई बात है कि समाचारपत्र समाज सेवा के साधन हैं। जो लोग समाचारपत्रों को केवल धन कमाने का साधन बनाना चाहते हैं, वह भी लोकहित के बुर्के में छुप कर ही कार्य सिद्धि कर सकते हैं, अन्यथा नहीं। समाचारपत्रों के जीवन और उनकी मान–प्रतिष्ठा इसी बात पर निर्भर है कि वह लोक के लिये कितने हितकारी हो सकें। समाचारों को सनसनी खेज बनाने के लिए बढ़ा–चढ़ाकर की गई टिप्पणियां घातक हो सकती हैं। हाल के वर्षों में पश्चिमी देशों के टेबलाइड अखबारों की तरह भारत के अखबारों में कुछ खबरों को उत्तेजित ढंग से पेश करने का मोह बढ़ने लगा है। इससे किसी प्रकाशन की प्रसार–संख्या भले ही बढ़ती हो, पत्रकारिता के दूरगामी हितो ंको क्षति पहुंचाती है। प्रेस की स्वतंत्रता यदि संपादक या पत्रकार की स्वतंत्रता है तो वह पाठकों की भी स्वतंत्रता है। प्रेस की स्वतंत्रता है। प्रेस की स्वतंत्रता पाठकों की स्वतंत्रता के बिना नहीं हो सकती है।

पाठकों को यह अधिकार है कि उन्हें सही सूचना मिलें। संविधान की धारा–19 (1) में जो प्रेस की स्वतंत्रता दी गई है, धारा–19 (2) में उस पर कुछ मामलों मे प्रतिबंध भी लगा हुआ है। जैसे– यदि किसी समाचार से अपराध को उकसाया जाए या जिससे देश की प्रतिष्ठा का आघात पहुंचे या अदालत की अवमानना हो, तो ऐसा लेखन कानूनी रूप से अनुचित है। समाचारपत्रों के पास लोक–हित के लिये दो बड़े साधन हैं। प्रथम समाचारों का संग्रह और प्रकाशन, और दूसरा पाठकों की सम्मति को विशेष प्रकार से मोड़ना। इनमें से समाचारों का संग्रह और प्रकाशन समाचारपत्रों का सबसे प्रधान और व्यापक कार्य है। अमेरिका में 'न्यूयॉर्क टाइम्स' और 'वाशिगंटन पोस्ट' जैसे अखबारों ने जब वियतनाम युद्ध से संबधित रक्षा मंत्रालय के गुप्त दस्तावेज प्रकाशित किए तो सरकार बेहद उत्तेजित हुई तथा मामला अदालत तक पहुंचा। जून 1971 में अदालत द्वारा दिए गए फैसले में कहा गया कि इस प्रकार के समाचार और लेखों के प्रकाशन पर रोक नहीं लगाई जा सकती है, क्योंकि स्वतंत्र प्रेस का यह पहला दायित्व है कि वह सरकार के किसी भी विभाग को जनता के साथ छल–छद्म करने या कुछ छिपाने से रोके। उस सच को जो सरकार छिपाना चाहती है, उसे बेनकाब कर जनता क सामने लाना ही प्रेस का प्रथम दायित्व है। अमेरिकी अदालत ने यह भी कहा कि कूटनीतिक और सुरक्षा संबंधी रहस्यों को उजागर करना प्रेस की नैतिक जिम्मेदारी है। इसके लिए गोपनीयता की दुहाई नहीं दी जा सकती। रक्षा से जुड़ा एक अन्य विवाद ब्रिटेन में भी हुआ था, जब कुछ अधिकारियों ने एक सांसद को कुछ गोपनीय दस्तावेज उपलब्ध करा दिए। बाद में संबधित अधिकारी पर सरकारी गोपनीयता कानून के तहत मुकदमा चलाया गया। लंबी बहस के बाद अदालत ने यह फैसला दिया कि गोपनीयता कानून जनहित के लिए हैं, न कि जनता को सच न बताने या गुमराह करने के लिए। सबसे पहले खबर देने, सबसे आगे रहने, सबसे तेज कहलाने के बचपने में अपने चैनल बहुत सा

अपव्यय करते हुए भी कुल मिलाकर उन बच्चों की मरह नजर आते हैं जो आसमान से गिरती हुई पंतग को भरी सड़क पर लूटने के लिए दौड़ लगाते हैं और पतंग लूट कर दूसरे बच्चों से बचते हुए कहीं कोने में दुबक कर डोर को अंगुली में लपेटकर विजयी मुद्रा में घर आते हैं। घर वाले पीठ ठोकते हैं।

सब जानते हैं कि यह अत्यंत ही गंभीर और जिम्मेदारी में भरा काम है। कठिनाईयों से भरी घटनाओं से उभ–चूभ भरे समय में यह पूरी तरह से जवाबदेह भरा काम बन जाता है। नेता लोग, उनके दल जवाबदेही से मुकर सकते हैं। उसकी आवाज, छवि, उसका पीस टू कैमरा उसे चौराहे पर खड़ा कर देता हैं। यही उसकी ताकत भी हैं। यह वही खबर को पंतग की तरह उड़ाने लगेगा तो एक्सीडेण्ट तो होंगे ही। लोग पत्रकारों को पत्रकार नहीं पतंगबाज कहा करेंगे। यह सब पत्रकारिता के विकास के लिए भला न होगा। अभी हमारी पत्रकारिता को बाजार के भी अयोग्य है। बाजार एक स्तर पर विनियम करता है लेकिन विनियम भी बड़ा व्यवस्थित होता है वहॉ हर वक्त चेक्स एण्ड बैलेंसेज हुआ करते हैं। वह कोरी गप्प या पंतगबाजी नहीं है। आज अधिकांश इलैक्ट्रोनिक मीडिया निजी क्षेत्राधिकार में हैं। स्पष्ट है इसका प्रधान लक्ष्य अर्थोपार्जन होता है। समाज कल्याण इनकी द्वितीय प्राथमिकता है। तमाम समाचार चैनलों के मध्य आज गला काट प्रतियोगिता मची हुई है। ऐसी स्थिति में समाचार, समाचार न होकर एक उत्पाद होकर रह गया है। इलैक्ट्रोनिक मीडिया हो चाहे प्रिंट मीडिया, वे अपने नियोंजकों, प्रायोजकों, विज्ञापनदाताओं प्रभावशाली व शक्तिशाली व्यक्तियों, विशिष्टजनों की रूचियों को नजर अंदाज नहीं कर सकते। ऐसे में इलैक्ट्रोनिक मीडिया का सम्पूर्ण सरोकार समाज के प्रति नहीं हो सकता।

सामान्यतः आम आदमी मीडिया से रोचक समाचार चाहता है। समाचार उनके लिए सदैव महत्वपूर्ण रहे हैं और आज भी हैं। रोचकता का पुट उन्हें समाचार के और भी करीब लाता है और समाचारों को ग्राहय बनाता है। आज ऐसा लगता है कि लोगों को भूख मिटाने के लिए अन्न की बजाय 'अचार' खाने के लिए प्रेरित किया जा रहा है। समाचार मीडिया अधिकाधिक उपभोक्ता की चाहत पर केंद्रित होता जा रहा है और एक गंभीर नागरिक की सूचना–आवश्यकताओं की अनदेखी की जा रही है।

आज संचार माध्यम और उसकी बहुआयामी सामाजिक भूमिका पर एकांगी दृष्टिकोण से नहीं सोचा जा सकता। एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में ही संचार–संसार की पड़ताल की जा सकती है। खासतौर से एक ऐसे दौर में, जब परंपरागत संचार माध्यम लुप्तप्राय है या हाशिए पर फेंक दिए हैं और उनका स्थान हाईटैक एवं सुपर स्पीड के माध्यम ले रहे हैं, तब सूक्ष्म व बृहतस्तरीय समाजों के साथ इनके पेचीदे रिश्तों को समझना एक चुनौती व जोखिम भरा काम है। क्योंकि आधुनिक संचार माध्यमों ने शासकों व शासितों, उत्पादकों व उपभोक्ताओं, दृष्टि व क्रिया और कल्पना व कृति को एक साथ विभिन्न स्तरों पर प्रभावित किया है। यही नहीं संचार के इलैक्ट्रानिक माध्यमों ने राष्ट्रों की अभेद्य व पवित्र समझी जाने वाली संप्रभुता एंव भौगोलिक सीमाओं और सामाजिक–सांस्कृतिक अस्मिताओं को भी पहले जैसा स्थायी नहीं रहने दियाहै। दक्षिण–पश्चिम एशिया की मध्ययुगीन मूल्य–दृष्टियों पर आधारित व्यवस्थाएं एंव राजसत्ताएं, टी०वी० बीम–हमलों के सामने लाचार खड़ी हैं।इस पूर्व औद्योगिक युग के मानदंडों पर चलने वाले इन समाजों के समक्ष भविष्य में 'सवाईवल' का सवाल पैदा हो गया है, वे देख रहे कि इलैक्ट्रानिक बीमें (तरंगें) उनके मूलभूत विश्वासों को बींध रही है।

लेकिन वे सी०एन०एन०, स्टार प्लस, बी०बी०सी०, एम०टी०वी० जैसे विश्वव्यापी चैनलों के छवि–अश्वों द्वारा रौंदी जा रही सामाजिक निजिता, वैयक्तिक निजिता और राष्ट्रीय अस्मिता की रक्षा करने में असमर्थ हैं। बल्कि, यह कार्य अंसभव–सा प्रतीत हो रहा है। आज एकल आयामी सांस्कृतिक एंव जीवन शैली' के संचार माध्यमों ने पूर्व औद्योगिक युगीन पांरपरिकताओं और हाईटैक आधुनिकता को स्वीकार करें या अपने खोल में खोए रहें?यह आज का एक अपरिहार्य सवाल' है जिससे पलायन नहीं किया जा सकता। समाजों का जब अनौंपचारिक अवस्था–काल था, तब संचार ने व्यक्ति और समाज पर अपना आधिपत्य स्थापित करने की चेष्टा नहीं की थी। बल्कि यह कहना ज्यादा सही होगा कि उसमें यह भूमिका निभाने की क्षमता ही नहीं थी। आज भी आदिवासी और पूर्वमशीनीकृत कृषि जैसे अनौपचारिक समाजों में आधुनिक संचार माध्यमों की वर्चस्ववादी भूमिका अस्तित्व में नहीं आ सकी है। अभी अनौपचारिक समाजों में इनका कमोडिटी रूप' सामने नहीं आया है। यही वजह है कि ये अनौपचारिकता समाज 'व्यक्तिवाद' एवं 'विलगाव' से अभी तक बचे हुए है। पूंजी, मशीन, उपयोग और बाजार ने औपचारिक समाज के प्रचार माध्यमों को एक बहुआयामी सत्ता प्रदान की है।

राज्य और जन के प्रति दृष्टि का स्वरूप पत्रकारिता के पारस्परिक संबंधों को आकार देती है। लेकिन यह दृष्टि एक स्वतंत्र हरकत नहीं है, राज्य और जन इसे निरन्तर प्रभावित करते हैं। बल्कि यह भी कहा जा सकता है कि राज्य और जन की मिली–जुली आंदोलनात्मक क्रियाओं के बीच यह दृष्टि जन्म लेती एवं प्रौढ़ होती रहती है। पर राज्य और जन की आंदोलनात्मक क्रियाओं से अलगाव रखते वाली दृष्टि लंबे समय तक जीवित भी नहीं रह सकती। एक जीवंत पत्रकारिता के लिए यह जरूरी है कि उसके सरोंकारों की धुरी राज्य और जन रहें।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. समाज विज्ञान शोध पत्रिका, डॉ ए०के० रस्तोगी पृष्ठ संख्या – 218
2. हिन्दी पत्रकारिता, कल आज और कल, पृष्ठ संख्या 27
3. इन्द्र विद्या वाचस्पति, पत्रकारिता के अनुभव,पृष्ठ संख्या 18
4. पत्रकारिता के सिंद्धात, डा० गुरूशरण लाल, पृष्ठ संख्या– 09
5. हिन्दी पत्रकारिता, कल आज और कल, पृष्ठ संख्या 114
6. आधुनिक पत्रकारिता, डा० अर्जुन तिवारी, पेज 130
7. समाज विज्ञान शोध पत्रिका, डा. ए०के० रस्तोगी पृष्ठ संख्या – 214
8. बसुधरा मिश्र, पत्रकारिता के बदलते तेवर, पेज 69,70
9. उप राष्ट्रपति हामिद अंसारी का 28 जनवरी, 2010 का भाषण, पी०आई०बी०
10. अमित कुमार सिंह, भूंमडलीकरण और भारत, पेज 173
11. विजय दत्त श्रीधर, सामाजिक प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 150,151
12. महरोली, भूमण्लीय समय और मीडिया पृष्ठ सं – 58,59
13. प्रवीण शर्मा, कला आज और कल, पृष्ठ संख्या : 26,27,28,29,30
14. अमित कुमार सिंह, भूंमडलीकरण और भारत, पेज 155,156
15. रामशरण जोशी, मीडिया – विमर्श, पृष्ठ संख्या : 01, 62
16. रामशरण जोशी, मीडिया–विमर्श, पृष्ठ वही